रागी में झुलसा रोग का समेकित प्रबंधन

संजीव कुमार[1], सी.एस. आजाद[1], राकेश कुमार[2], देवेंदर मण्डल[1] और बाल कृष्ण[1]

"रागी एक पोषक तत्वों से भरपूर पारंपरिक अनाज है, जो मुख्यत: भारत के दक्षिणी एवं मध्य राज्यों में सीमांत भूमि पर उगाया जाता है। यह श्री अन्न न केवल खाद्य सुरक्षा, बल्कि पोषण सुरक्षा में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हालांकि, रागी की उत्पादकता को झुलसा रोग से गंभीर चुनौती मिलती है, जो पत्तियों, गर्दन तथा बालियों पर आक्रमण कर 50-80 प्रतिशत तक उपज हानि पहुंचा सकता है। यह लेख रोगजनक की पहचान, लक्षण, अनुकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों, रोग चक्र तथा इससे होने वाले आर्थिक प्रभावों का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसके अतिरिक्त, रोग प्रबंधन हेतु प्रतिरोधी किस्मों का चयन, पारंपरिक विधियां, रासायनिक नियंत्रण एवं जैविक उपायों पर आधारित एकीकृत रणनीतियां सुझाई गई हैं। प्रारंभिक पहचान एवं समन्वित हस्तक्षेप इस रोग के दुष्प्रभावों को न्यूनतम करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।"

रागी, जिसे फिंगर मिलेट या मडुआ भी कहा जाता है, भारत के पारंपरिक कृषि परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण श्री अन्न फसल है। यह मुख्यत: कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, ओडिशा और महाराष्ट्र में वर्षा आधारित सीमांत भूमि पर उगाई जाती है तथा किसानों की आजीविका का एक प्रमुख आधार है। इसकी लोकप्रियता का कारण इसका जलवायु अनुकूल, उच्च पोषण मूल्य और कम लागत में उत्पादन की क्षमता है। रागी प्रोटीन, कैल्शियम, आयरन, फाइबर तथा आवश्यक अमीनो अम्ल से भरपूर होती है। इससे यह कुपोषण और एनीमिया जैसी समस्याओं के नियंत्रण में उपयोगी सिद्ध होती है। इसी कारण हाल के वर्षों में इसे 'सुपर फूड' का दर्जा भी प्राप्त हुआ है।

हालांकि, रागी की खेती को झुलसा रोग जैसी गंभीर समस्या का सामना करना पड़ता है, जो 50-80 प्रतिशत तक की उपज हानि का कारण बन सकती है। यह रोग न केवल फसल की उत्पादकता को प्रभावित करता है, बल्कि दानों की गुणवत्ता, चारे की उपयोगिता तथा किसानों की आय पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालता है। अत: इस रोग की समय पर पहचान, रोग चक्र की समुचित समझ तथा एकीकृत रोग प्रबंधन रणनीतियों को अपनाना अत्यंत आवश्यक है। यह रोग पाइरिकुलैरिया ग्रिजिया नामक कवक के संक्रमण से होता है, जिसे वर्तमान में वैज्ञानिक रूप से मैग्नापोर्थे ग्रिजिया के नाम से भी जाना जाता है।

[1]बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर-813210 (बिहार); [2]भाकृअनुप का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना-800014

रासायनिक नियंत्रण

झुलसा रोग के प्रभावी नियंत्रण में रासायनिक उपाय महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विशेषकर जब संक्रमण प्रारंभिक अवस्था में हो।

बीज उपचार

फसल की शुरुआत से ही सुरक्षा हेतु बीजों को कार्बेण्डाजिम (2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) से उपचारित करना चाहिए। यह प्रारंभिक संक्रमण को रोकने में सहायक होता है।

फफूंदनाशी छिड़काव

जैसे ही पत्तियों पर रोग के लक्षण दिखाई दें, तुरंत ट्राइसाइक्लाजोल (0.6-1 ग्राम/लीटर पानी), प्रोपिकोनाजोल (0.1 प्रतिशत) या कार्बेण्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करें। यदि मौसम रोग के अनुकूल हो तो छिड़काव को 10-12 दिनों के अंतराल पर दोहराया जा सकता है, विशेष रूप से फूल आने और दूधिया अवस्था में। इसके अतिरिक्त, एजॉक्सिस्ट्रोबिन या डाइफेनोकोनाजोल का उपयोग भी रोग के प्रसार को रोकने और फसल को सुरक्षा प्रदान करने में प्रभावी है।

रोग के लिए अनुकूल परिस्थितियां

झुलसा रोग का विकास विशेष पर्यावरणीय स्थितियों में तेजी से होता है। जब वायुमंडलीय आर्द्रता 90-100 प्रतिशत तक पहुंचती है। पत्तियों पर ओस या वर्षा के कारण लंबे समय तक नमी बनी रहती है, तो रोग अत्यधिक फैलता है। इसके अलावा, 20-30 डिग्री सेल्सियस के बीच का तापमान इस कवक के लिए अत्यंत अनुकूल माना जाता है। घना रोपण और अत्यधिक नाइट्रोजन उर्वरक का प्रयोग पौधों को कोमल बनाकर उन्हें संक्रमण के प्रति अधिक संवेदनशील बना देता है। यदि इन सभी कारकों की उपस्थिति में समय पर रोकथाम न की जाए, तो झुलसा रोग खेत में महामारी का रूप ले सकता है।

रोग चक्र

झुलसा रोग फैलाने वाला कवक मुख्य रूप से संक्रमित बीजों और खेत में पड़े पौध अवशेषों में जीवित रहता है, जो अगली फसल के लिए प्राथमिक स्रोत के रूप में कार्य करते हैं। रोगग्रस्त पत्तियों या अन्य भागों पर बने बीजाणु

हवा या वर्षा के छींटों के माध्यम से स्वस्थ पौधों तक पहुंचते हैं और उन्हें संक्रमित कर देते हैं। पत्तियों पर लंबे समय तक बनी नमी जैसे-सुबह की ओंस या हल्की वर्षा के बाद संक्रमण की तीव्रता को और बढ़ा देती है। यदि इन परिस्थितियों में समय पर नियंत्रण न किया जाए, तो रोग खेत में तेजी से फैल सकता है और फसल को गंभीर नुकसान पहुंचा सकता है।

आर्थिक प्रभाव

झुलसा रोग का रागी उत्पादन पर गहरा आर्थिक प्रभाव पड़ता है, विशेष रूप से संवेदनशील किस्मों में, जहां गंभीर संक्रमण के कारण 50-80 प्रतिशत तक उपज हानि देखी गई है। रोग दानों के भराव और गुणवत्ता दोनों को प्रभावित करता है, जिससे बाजार में उत्पाद का मूल्य घट जाता है। इसके अलावा, रोग अप्रत्यक्ष रूप से चारे की गुणवत्ता में कमी, प्रबंधन लागत में वृद्धि और फसल की संपूर्ण उत्पादकता में गिरावट का कारण बनता है। समय पर नियंत्रण न होने पर यह रोग किसानों की आय और खाद्य सुरक्षा दोनों को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकता है।

प्रबंधन

प्रतिरोधी किस्मों का चयन

प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग न केवल उपज की स्थिरता बनाए रखने में सहायक होता है, बल्कि यह एक पर्यावरण अनुकूल और लागत प्रभावी रणनीति भी है। जहां भी संभव हो, किसानों को झुलसा प्रतिरोधी रागी किस्मों जीपीयू-28, जीपीयू-47, जीपीयू-67, पीआर-202 की खेती करनी चाहिए। ये किस्में रोगजनक से स्वाभाविक प्रतिरोध रखती हैं, जिससे संक्रमण की आशंका कम होती है।

नाव आकार पत्ती झुलसा का संक्रमण

पारंपरिक उपाय

झुलसा रोग के प्रबंधन में पारंपरिक विधियां अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सबसे पहले, किसानों को प्रमाणित और रोगमुक्त बीजों का प्रयोग करना चाहिए, ताकि प्रारंभिक संक्रमण की आशंका कम हो सके। इसके अलावा, फसल चक्र अपनाकर और कटाई के बाद पौध अवशेषों को नष्ट करके रोगजनक के जीवनचक्र को तोड़ा जा सकता है। घना रोपण पौधों के बीच वायु प्रवाह को बाधित कर पत्तियों पर अधिक समय तक नमी बनाए रखता है, जो झुलसा रोग के प्रसार को बढ़ावा देता है। इसलिए रोपाई में उचित दूरी रखना आवश्यक है।

अत्यधिक नाइट्रोजन का प्रयोग पौधों को कोमल बनाता है, जिससे वे संक्रमण के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं। जल जमाव भी रोग की प्रगति में सहायक होता है। अत: खेत में प्रभावी जल निकासी सुनिश्चित करनी चाहिए। इन सभी उपायों को अपनाकर रोग पर प्रभावी नियंत्रण पाया जा सकता है।

जैविक नियंत्रण

जैविक विधियां झुलसा रोग नियंत्रण में पर्यावरण संवेदनशील और टिकाऊ विकल्प प्रदान करती हैं। लाभकारी जीवाणु और कवक रोगजनकों पर प्रभावी नियंत्रण रखते हैं और पौधों की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाते हैं।

- **कवक:** ट्राइकोडर्मा हार्जिनियम (0.3 प्रतिशत)
- **जीवाणु:** स्यूडोडोमोनास फ्लोरेसेंस (0.6 प्रतिशत)

इनका उपयोग बीज उपचार, मृदा मिश्रण और पर्णीय छिड़काव के रूप में किया जा सकता है। यह रोगजनक की सक्रियता को कम करता है, पौधों की वृद्धि और रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार करता है। रसायनों पर निर्भरता को घटाकर प्राकृतिक संरक्षण सुनिश्चित करता है।

रागी में झुलसा रोग फसल की उपज और गुणवत्ता दोनों के लिए गंभीर संकट है। रोग की प्रारंभिक पहचान, कृषि उपयुक्त रोकथाम विधियों का पालन, समय पर फफूंदनाशकों का उपयोग और प्रतिरोधी किस्मों को अपनाना प्रभावी प्रबंधन के लिए अनिवार्य हैं। समय पर रोग की पहचान कर उचित उपाय अपनाने से हानि को न्यूनतम किया जा सकता है। ■

रोग के लक्षण

पत्ती झुलसा

पत्ती झुलसा रागी में झुलसा रोग का प्रारंभिक और सबसे सामान्य रूप है। इसके लक्षण सबसे पहले पत्तियों पर छोटी नौका आकार के धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। इन धब्बों का केंद्र अक्सर धूसर या राख जैसा भूरा होता है, जबकि किनारे गहरे भूरे रंग के होते हैं। अनुकूल मौसम विशेषकर उच्च आर्द्रता और पत्तियों पर पानी में ये धब्बे आकार में बढ़कर आपस में मिल जाते हैं और मृत ऊतक का निर्माण करते हैं। जैसे-जैसे संक्रमण बढ़ता है, गंभीर रूप से प्रभावित पत्तियां नीचे की ओर सूखने लगती हैं। इससे पौधे की प्रकाश संश्लेषण क्षमता घटती है और उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

बालियां और फिंगर झुलसा

यह रागी में झुलसा रोग का वह चरण है, जो प्रजनन अवस्था में प्रकट होता है और सीधे उपज को प्रभावित करता है। जब रोग बालियों की गर्दन को संक्रमित करता है, तो वह काली पड़ने लगती है, सूख जाती है और अंतत: इतनी कमजोर हो जाती है कि बालियां टूटकर गिर सकती हैं या पूरी तरह सूख जाती हैं। वहीं फिंगर्स (दाने वाली बालियां) पर भी धब्बे उभरने लगते हैं, जिससे दाने भरना रुक जाते हैं और वे सिकुड़कर खराब हो जाते हैं। इस अवस्था में रोग दाने की गुणवत्ता और मात्रा दोनों को गंभीर रूप से प्रभावित करता है।

अंकुरण काल झुलसा

यह रागी की प्रारंभिक वृद्धि अवस्था में होने वाला संक्रमण है, जो पौधों की जीवित रहने की क्षमता को सीधे प्रभावित करता है। इस अवस्था में कोलीऑप्टाइल और प्राथमिक पत्तियों पर पानी भरे, गीले घाव दिखाई देते हैं। इन घावों के कारण पौधे कमजोर हो जाते हैं और कई बार पूरी तरह मर जाते हैं, जिससे खेत में पौधों की संख्या घट जाती है। इसका प्रभाव फसल की समानता और घनत्व पर भी पड़ता है। यदि समय पर प्रबंधन न किया जाए, तो यह असमान अंकुरण और खराब प्रारंभिक विकास का कारण बनता है।